**Research Scholer Name** : Pankaj Kumar Chaubey

**Supervisor :** Prof. Durga Prasad Gupt

**Department :** Hindi

**Title :** Bhikhari Thakur Kendrit Rachnaon me Bhikhari Thakur ke prateetikaran ka Adhyan

## संक्षिप्त शोध-सार

(बीज शब्द-लोक नाटक, लोक संस्कृति, लोक कला, प्रतीक, लोक कवि)

भिखारी ठाकुर बिहार के भोजपुरी भाषाभाषी क्षेत्र के एक अत्यन्त पिछड़े हिस्से में पैदा हुए एक रचनाकार थे जो अपनी रचनाओं से उन्हीं सामाजिक कुरीतियों को उजागर - प्रश्नांकित करते थे, जिनसे मुक्ति का आहवान पुनर्जागरण के नेताओं ने किया था। लेकिन पुनर्जागरण के ज्यादातर नेतागण सामाजिक रूप से ऊपरी तबके से थे , जबकि भिखारी ठाकुर नाई जाति में पैदा हुए थे और पढ़े-लिखे नहीं थे , भिखारी को अपार लोकप्रियता मिली। किन्चित इसके पीछे 'तमाशा' के उस माध्यम का भी हाथ रहा जिनके जरिये उन्होंने अपनी बात कही लेकिन जीते जी किंवदन्ती बन चुके भिखारी ठाकुर के प्रतीकीकरण की प्रक्रिया बाद में हुई। इस प्रक्रिया में बिहार के राजनीतिक समीकरणों और वहां के नेताओं ने भी प्रमुख भूमिका निभाई।

बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री लालू प्रसाद यादव ने अपने शासनकाल में भिखारी ठाकुर के कला, उनके साहित्य और उनके नाट्यमण्डली से जुड़े लोगों को समर्थन और प्रोत्साहन दिया। यद्यपि भिखारी ठाकुर ग्रथांवली का पहला खण्ड भिखारी ठाकुर आश्रम , कुतुबपुर (सारण) द्वारा 1971 में प्रकाशित किया जा चुका था , लेकिन उनकी सम्पूर्ण ग्रंथावली का प्रकाशन राष्ट्रीय जनतादल के कार्यकाल में बिहार राज्यभाषा परिषद् से प्रकाशित हुआ। 2005 में आयी इस ग्रंथावली का संपादन डॉ. वीरेन्द्र नारायण यादव और नागेंद्र प्रताप सिंह ने किया। यह सम्भव है कि राजद की राजनैतिक चेतना और भिखारी ठाकुर के सामाजिक सरोकारों में समानताएं रही हो दोनों ही दलित और अन्य पिछड़े वर्गों के हिमायती थे। लेकिन सरकार के निरन्तर समर्थन और इस ग्रंथावली के प्रकाशन से जनमानस के बीच एक प्रतीक के रूप में भिखारी ठाकुर और मजबूती से उभरे।

साहित्य में भिखारी ठाकुर के प्रतीकीकरण के प्रसंग और महत्व को समझने के लिए भोजपुरी साहित्य के इतिहास , उसकी धाराओं और उसकी प्रवृत्तियों को समझना जरूरी है। भोजपुरी साहित्य का एक लंबा इतिहास रहा है। वैसे तो कुछ जानकार कबीर को भोजपुरी साहित्य के आदिकवि के रूप में देखते हैं , लेकिन कइयों ने इसकी जड़ें विक्रमशिला के सिद्ध साहित्य और शाहाबाद के ईशानचंद्र की कविताओं में ढूंढी है। ये आध्यात्मिक और संस्कार गीत भोजपुरी साहित्य की सुदीर्घ लोक परंपरा को चरितार्थ करते हैं दूसरी तरफ अगर हम भोजपुरी साहित्य में प्रकाशन की परंपरा को देखें तो यह भी लगभग 140 वर्ष पुरानी है। इसकी शुरुआत

1885 में तेग अली के बदमाश दर्पण के प्रकाशन के साथ होती है। यह बात भी उल्लेखनीय है कि यद्यपि तेग अली बनारस के भारतेंदु मंडल के संपर्क में आए थे, और उन्हीं के प्रोत्साहन की वजह से बदमाश दर्पण प्रकाशित हो पाया था, लेकिन अली स्वयं कोई साहित्यकार या विद्वान नहीं थे। ये पहलवानी करते थे और पेशे से लठैत थे। भोजपुरी की सबसे पहले प्रकाशित पुस्तक के रचनाकार का पेशा इस बात की ओर इशारा करता है कि प्रिंट के आने के बाद भी भोजपुरी साहित्य में लोक संस्कृति का हस्तक्षेप व्यापक रहा है। अपनी बहुचर्चित किताब जोरालिटी एंड लिटरेसी दी टेक्नोलोजईजिंग ऑफ दी वर्ल्ड (1982) में वॉल्टर जे ऑग कहते है कि प्रिंट के आने से हमारे विचार पद्धति, सोच और संस्कृति में व्यापक परिवर्तन आए। लोक संस्कृति किताबों में कहीं गुम सी हो गयी और एक अनूठी बौद्धिक सभ्यता का प्रादुर्भाव हुआ। लेकिन मोजपुरी साहित्य की धाराओं पर अगर नज़र डालें तो हम पाएंगे कि आंग का सूत्रीकरण शायद पूरी तरह से सटीक नहीं है। प्रिंट के आने के बाद भी भोजपुरी साहित्य सिर्फ मनोरंजन के ही नहीं बल्कि भोजपुरी साहित्य और समाज के बौद्धिक विन्यासों के भी प्रतीक हैं।

भिखारी ठाकुर के प्रतीकीकरण के विविध आयामों को जानने के लिए इस शोध प्रबंध में उनके जीवन पर आधारित साहित्य को समझने का प्रयास किया गया है। साथ ही कुछ ऐसे संस्मरणों का भी जिक्र मिलेगा, जिनमें लेखक भिखारी ठाकुर के नाटक से जुड़े अपने अनुभव व्यक्त करते नज़र आते हैं, या फिर उनके गांव कुतुबपुर की यात्रा से जुड़े अपने संस्मरणों को शब्द देते है। उनके जीवन पर केंद्रित साहित्य और उनसे जुड़े संस्मरणों के अध्ययन में दो बातें सामने आती है। पहला, कई बार उनके नाटकों के कथानक से ज्यादा उनकी लोकप्रियता पर बात होती नजर आती है।

भिखारी ठाकुर के लोकनाटकों के पात्रों के नाम के पीछे प्रतीकीकरण है। हर नाम एक खास संदर्भ को अपने में समाहित किए हुए है। उनके नाटकों के नाम ऐसे हैं जो अक्सर दलित वर्गों में ही पाए जाते हैं। जैसे उपदर उदवास, झांप्लू चटक येथरु, अवजो, लोमा आदि ऐसे नाम अक्सर संभ्रात समझी जाने वाली जातियों में नहीं चलते हैं। भिखारी ठाकुर की भारतीय सभ्यता और संस्कृति में बड़ी आस्था थी वे व्यक्तिगत आचार व्यवहार तथा सामाजिक आदान-प्रदान में उन सांस्कृतिक परम्पराओं का पालन करते थे। वर्ण-व्यवस्था की त्रासदी को स्वयं भोगते हुए भी वे उनके खिलाफ कोई उग्र प्रतिक्रिया की जगह रचनात्मक समाधान की उम्मीद रखते थे। यह उनकी रचनाओं से स्पष्ट है। उसमें विश्वास करते थे। शोषित , दलित, नारी और गरीब के उपर हो रहे अत्याचार के प्रति वे दुखी थे और उनकी मुक्ति के लिए उन्होंने आजीवन प्रयत्न किया। उन्होंने अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम नाटकों को बनाया तमाशा और नाच के जरिए उन्होंने तत्कालीन समाज की विद्रूपताओं पर साहसपूर्ण तरीके से विवेचना की मनोरंजन के साथ-साथ उन्होंने सामाजिक विकास की बातें भी अपनी कला के माध्यम से की। भिखारी ठाकुर चेतना विकसित करने में विश्वास करते थे दरअसल , ये इसे ही सामाजिक परिवर्तन का आत्मगत साधन मानते थे।